इकाई 4 काव्य-लक्षण

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 काव्य-लक्षण का अभिप्राय

4.3 प्रमुख आचार्यों के काव्य-लक्षण संबंधी मत

- 4.3.1 भामह
- 4.3.2 दण्डी
- 4.3.3 वामन
- 4.3.4 कुंतक
- 4.3.5 मम्मट
- 4.3.6 विश्वनाथ
- 4.3.7 पंडितराज जगन्नाथ

4.4 हिंदी के प्रमुख कवियों-आलोचकों की काव्य लक्षण संबंधी मान्यताएँ

- 4.4.1 रीतिकालीन कवियों की मान्यताएँ
- 4.4.2 आधुनिक हिंदी आलोचकों के मत

4.5 प्रमुख पाश्चात्य विचारकों के काव्य-लक्षण संबंधी मत

4.6 सारांश

4.7 अवधारणात्मक शब्द

4.8 उपयोगी पुस्तकें

4.9 बोध प्रश्न

4.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- काव्य-लक्षण के अभिप्राय को समझ सकेंगे;
- संस्कृत के प्रमुख आचार्यों द्वारा निरूपित काव्य के स्वरूप को जान सकेंगे;
- हिंदी के प्रमुख समीक्षकों और कवियों की काव्य-लक्षण संबंधी अवधारणाओं से परिचित हो सकेंगे; और
- पश्चात्य समीक्षकों एवं कवियों की काव्य-स्वरूप के संबंध में मान्यताओं को जान सकेंगे।

BHDC-106.indd 48 19-03-2021 08:51:34

4.1 प्रस्तावना

काव्य रचनात्मक प्रतिभा का ऐसा सहज प्रवाह है जिसमें जीवन और जगत की रागात्मक अनुभूति समाहित होती है। काव्य का कल्पना रंजित स्वरूप नया बना रहता है। उसका स्वरूप 'नूतने वै पुराणे' अर्थात अपने प्राचीन रूप में भी वह नित्य नवीन है। काव्य में भाव जगत और वस्तु जगत का समन्वय रहता है। काव्य मनुष्य के भावों-मनोविकारों को परिष्कृत कर उदात्त भूमि प्रदान करता है। काव्य का उद्देश्य अत्यंत व्यापक और गंभीर है, केवल मनोरंजन उसका प्रयोजन नहीं है। महाकाव्य में तो सर्वाहित की भावना प्रधान होती है अर्थात् जड़ चेतन दोनों के लिए मांगल्य-भावना असमान्य विद्यमान रहती है। काव्य कवि का कर्म माना गया है (कवेः कर्म काव्यम्) और कवित अलोक सामान्य प्रतिभा-संपन्न होता है अर्थात् अपनी प्रतिभा की कल्पना से वह जहाँ तक पहुँचता है, सामान्य व्यक्ति के लिए वहाँ तक पहुँचना संभव नहीं है। इसीलिए कवि को 'मनीषी, परिभू और स्वयंम् कहकर उसे विलक्षण माना गया है।

किसी पदार्थ, भाव या अनुशासन के अध्ययन के लिए आवश्यक है कि उसके लक्षण ठीक से समझ लिए जाएँ। विशेषतया, प्रवृत्ति या तत्वों के आधार पर लक्षणों को स्पष्ट किया जा सकता है। काव्य भावमूलक अभिव्यक्ति है, अंतः उसके स्वरूप का निर्धारण करना अत्यंत कठिन है। प्राचीन काल से अब तक काव्य के अनेक और अनेक विद्य लक्षण निरूपित किए जा रहे हैं किंतु किसी सर्वमान्य परिभाषा या लक्षण का विनिश्चय नहीं हो सका। देश-काल के प्रभाव से काव्य के स्वरूप में निरंतर परिवर्तन होने के कारण वस्तुनिष्ठ रूप से उसके लक्षणों को स्पष्ट नहीं किया जा सकता है। भारतीय और पाश्चात्य मनीषियों द्वारा काव्य-लक्षणों का जो निरूपण हुआ है, उसके अनुशीलन से काव्य के स्वरूप को समझा जा सकता है।

4.2 काव्य-लक्षण का अभिप्राय

किसी विषय या अनुशासन को गंभीरता से समझने के लिए उसके लक्षणों (विशेषताओं) को जानना आवश्यक है। काव्य-लक्षण से तात्पर्य उसके अंतरंग तत्वों से है। भारतीय काव्य शास्त्र (संस्कृत) में काव्य-लक्षण-निरूपण की सुदीर्घ परंपरा है और जिसका विकास स्थूल से सूक्ष्म की ओर लक्षित होता है। आचार्य भरत (नाट्यशास्त्र) से पण्डितराज जगन्नाथ (रसगंगाधर) तक दिए गए काव्य-लक्षणों के विश्लेषण से विकासात्मक अवधारणा स्पष्ट होती है। मामह, रुद्रट, हेमचंद्र, आदि अलंकारवादी आचार्य शब्द और अर्थ दोनों के समन्वित रूप को काव्य लक्षण मानते हैं, दण्डी एवं पण्डित राज जगन्नाथ शब्द प्रधान काव्य लक्षण मानते हैं। महिम मट्ट, भोज, विश्वनाथ आदि आचार्य रस केन्द्रित काव्य-लक्षणों का समर्थन करते हैं।

काव्य-लक्षणों को समझने के क्रम में काव्य, साहित्य और वाङ्मय, जो प्रायः समानार्थक प्रतीत होते हैं, उनके अंतर की विवेचना कर लेना उचित है। व्युत्पत्ति के आधार पर काव्य का अर्थ 'कवि का कर्म या भाव है। काव्य के कर्ता कवि को नवनवोन्मेश शालिनी प्रतिभासपन्न तथा लोकोन्तर वयना– निपुण' माना गया है। इसी आधार पर वाल्मीकि को आदि कवि और 'रामायण' को आदि काव्य कहा जाता है। काव्य का उक्त अर्थ कवि केंद्रित है किंतु स्वतंत्र रूप से भी काव्य का स्वरूप या लक्षण विभिन्न आचार्यों द्वारा विभिन्न रूपों में निरूपित किया गया है (दे. 4.3)। साहित्य का व्युत्पत्ति परक अर्थ 'साहितस्य भाव साहित्यम्' अर्थात् हित से युक्त सहभाव अलावा शब्द और अर्थ का सहभाव। संस्कृत आचार्यों ने शब्द एवं अर्थ के सहभाव को बहुत महत्व दिया

BHDC-106.indd 49 19-03-2021 08:51:34

है। साहित्य का यह अर्थ बहुत व्यापक है क्योंकि इसके अंतर्गत समस्त ग्रंथ समूह समाविष्ट हो जाते हैं। प्राचीन काल में काव्य और साहित्य दोनों ग्रंथ समूह समाविष्ट हो जाते हैं। प्राचीन काल में काव्य और साहित्य दोनों समानार्थ थे, बाद में काव्य संकुचित अर्थ में प्रयुक्त होने लगा। आज काव्य केवल पद्य रचनाओं के लिए रूढ़ है जबकि साहित्य के अंतर्गत गद्य, पद्य और चम्पू सभी माने जाते हैं। वाङ्मय का मूल रूप' 'वाक्म्मय' है अर्थात् जो कुछ वाणी से बोला जाता है वह वाङ्मय है किंतु व्यापक अर्थ है। आज समस्त भावात्मक और ज्ञानात्मक सामग्री, जो लिपिबद्ध है, उसे वाङ्मय की संज्ञा दी जाती है।

वाङ्मय के समांतर अंग्रेजी का 'लिटेरेचर' शब्द है अर्थात् जो कुछ भी लिखित है, इसे दो भागों में विभक्त किया गया है– शास्त्र या ज्ञानात्मक साहित्य और भावात्मक साहित्य भावात्मक रचनाओं– गद्य एवं पद्य का समावेश साहित्य में होता है। ये रचनाएँ रमणीय होती हैं और पाठक को आनन्द प्रदान करती हैं। शास्त्र या ज्ञानात्मक साहित्य के अंतर्गत दर्शन, आयुर्वेद, ज्योतिष, खगोल, भूगोल तथा अन्य सभी ज्ञान के अनुशासन आते हैं। अब हिंदी में काव्य और गद्य दोनों साहित्य कहलाते हैं। विशेष अर्थ में काव्य (पद्य साहित्य) तथा गद्य साहित्य कहा जाता है।

4.3 प्रमुख आचार्यों के काव्य-लक्षण संबंधी मत

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि काव्य अपने स्वरूप में बहुत व्यापक है। मूलरूप में तो कवि-कर्म को काव्य की संज्ञा दी गई है। भारतीय (संस्कृत), आचार्यों ने काव्य के लक्षणों का जो निरूपण किया, उसके आलोक में काव्य के स्वरूप को विश्लेषित किया जा रहा है। भारत में काव्य का शास्त्रीय चिंतन सबसे पहले भरतमुनि (द्वितीय शताब्दी विक्रमी) के ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में व्यवस्थित रूप में मिलता है। यद्यपि उन्होंने काव्य के लक्षणों का निरूपण नहीं किया किंतु नाटक की विशेषताओं का विवेचन करते हुए जिन तत्वों का उल्लेख किया है, वे काव्य के भी मूल तत्व हैं। वस्तुतः प्राचीनकाल में नाटक भी काव्य का एक प्रमुख रूप था और दृश्यकाव्य के अंतर्गत था। 'काव्येशु नाटक रम्यं' से यह बात स्पष्ट होती है। 'नाट्यशास्त्र में भरत मुनि की प्रसिद्ध कारिका के अन्तर्गत सत्काव्य के लिए सात बातों का उल्लेख है– (1) मृदुललित पदावली, (2) गूढशब्दार्थहीनता, (3) सर्वसुगमता, (4) युक्ति (तर्क) युक्तता, (5) नृत्य (अभिनय) में उपयोग किए जाने की योग्यता, (6) रस-प्रवाह के अनेक स्रोतों की योजना से परिपूर्ण, (7) संधियुक्तता। इनमें से पाँचवें और सातवें लक्षण दृश्यकाव्य (नाटक) की दृष्टि से रखे गए हैं।

यद्यपि इस कारिका में काव्य के आवश्यक तत्वों–रस, रीति, अलंकार, गुण आदि का उल्लेख है किंतु इसे मुख्य रूप से काव्य का लक्षण नहीं माना जा सकता है। इसमें वर्णित तत्व काव्य लक्षण से अधिक कविता की विशेषताएँ हैं।

भारतीय काव्यशास्त्र के प्राचीनतम आचर्य भामह माने जाते हैं, जिन्होंने काव्य-स्वरूप का व्यवस्थित विवेचन किया है, किंतु परंपरा से पुराण प्राचीन माने जाते हैं, अतः 'अग्निपुराण' में दिए गए काव्य-लक्षण को भामह के काव्य-लक्षण से पहले प्रस्तुत किया गया है जिसका अर्थ है– अर्थ को अभिव्यक्त करने वाली पदावली काव्य है, जो प्रत्यक्ष रूप में अलंकार युक्त, गुण-सहित तथा दोष-रहित हो। यह परिभाषा काव्य के बहिरंग (बाहरी) पक्ष को अधिक स्पष्ट करती है। इसमें अलंकारों को विशेष महत्व प्रदान किया गया है। काव्य की आत्मा (प्रमुख तत्व) का उद्घाटन इसमें नहीं हो सका। एक बात अवश्य है कि इस परिभाषा में प्रतिपादित तत्वों का प्रभाव परवर्ती काव्य-लक्षणों में स्पष्टतः दिखाई देता है।

BHDC-106.indd 50 19-03-2021 08:51:34

4.3.1 भामह

अलंकार आचार्य मामह ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'काव्यालंकार' में काव्य का लक्षण इस प्रकार दिया है–

शब्दार्थों संहितो काव्यं (काव्यालंकार- 1–16)

अर्थात् शब्द और अर्थ का समन्वित (सह) भाव काव्य है। इस प्रकार भामह शब्द और अर्थ के सहभाव को काव्य मानते हैं। इस लक्षण की विशेषताओं को इस प्रकार लक्षित कर सकते हैं–

(i) यह परिभाषा (लक्षण) संक्षिप्त, सरल और सुबोध है।

(ii) काव्य को मूल तत्वों– शब्द और अर्थ के महत्व को इसमें व्यक्त किया गया है।

(iii) 'सहितों' शब्द के द्वारा 'शब्द' और अर्थ के साहचर्य की अनेक स्थितियों की ओर संकेत किया गया है।

(iv) परवर्ती अनेक आचार्यों ने काव्य-लक्षण-निरूपण में इसमें निर्दिष्ट 'शब्दार्थों' से प्रेरणा प्राप्त की।

आचार्य भामह के काव्य-लक्षण को डॉ. कांतिचंद्र पाण्डेय, डॉ. भागीरथ मिश्र ने अतिव्याप्ति दोष से युक्त माना है। डॉ. भागीरथ मिश्र का मत है यह परिभाषा अत्यंत व्यापक है क्योंकि इसके क्षेत्र में काव्य के अतिरिक्त शास्त्र, इतिहास, वार्तालाप आदि सभी आ जाते हैं।

महिम भट्ट, भामह के काव्य-लक्षण को निर्दोष मानते हैं। उन्होंने 'सहितों' पद का अर्थ 'शब्द और अर्थ' का समकोटिक महत्व है, प्रतिपादित करने वाला माना है। इसका आशय है कि काव्य में शब्द और अर्थ समान महत्व रखते हैं, जबकि इतिहास आदि अन्य विषयों में अर्थ की प्रधानता होती है और शब्द का स्थान गौण होता है।

आचार्य भामह के काव्य-लक्षण को यथातथ्य समझने के लिए इस पर विचार करना आवश्यक है। प्रस्तुत लक्षण के पहले की कारिकाओं में आचार्य भामह ने स्पष्ट किया है कि उनके पूर्ववर्ती आचार्यों की शब्द और अर्थ को लेकर दो प्रकार अतिवादी मान्यताएँ थीं। एक विचारधारा काव्य-सौंदर्य को शब्दालंकारों में निहित मानती थी तो दूसरी अर्थालंकारों में। शब्दालंकारवादी का तर्क हैं कि प्राथमिक चारुता शब्द कौशल में ही है क्योंकि शब्द के सुनाई पड़ने पर ही अर्थ की अभिव्यक्ति होती है। अतः काव्य के स्वरूप की प्रतिष्ठा मूलतः शब्द में है और अर्थ तो शब्द के बाद आता है। अर्थालंकारवादी अपना तर्क प्रस्तुत करते हैं कि काव्यगत सौंदर्य का बोध तो अर्थ-प्रतीति के बाद ही होता है। अतः अर्थालंकार ही आनंदानुभूति का कारण हो सकता है। भामह दोनों अतिवादी मतों में समन्वय स्थापित करते हुए अपना काव्य-लक्षण निरूपित करते हैं। उनकी दृष्टि में शब्द और अर्थ दोनों की चारुता में काव्य-सौंदर्य निहित है।

4.3.2 दण्डी

आचार्य दंडी ने अपने ग्रंथ 'काव्यादर्श' में काव्य का लक्षण इस प्रकार निरूपित किया है–

शरीर तावदिष्टार्थव्यवचिछन्ना पदावली (काव्यार्थ; 1–10)

BHDC-106.indd 51 19-03-2021 08:51:34

अर्थात् इष्टार्थ (ह्रदयाह्लादक अर्थ) से युक्त पद समूह (पदावली) अर्थात् दोनों मिलकर ही काव्य का शरीर है। दण्डी पदावली (पद समूह) को ही काव्य मानते हैं, शब्दार्थ को नहीं। यद्यपि दण्डी की दृष्टि में अलंकार-युक्त होने पर ही काव्य आह्लादक हो सकता है फिर भी उन्होंने अलंकारों के साथ इसका भी समावेश किया है। अतः दंडी का दृष्टिकोण भामह की अपेक्षा उदार है। दंडी के काव्य-लक्षण का एक वैशिष्ट्य यह है कि उन्होंने पदावली को काव्य का शरीर कहकर काव्यात्मा की खोज की ओर संकेत कर दिया और परवर्ती आचार्यों में व्यापक और गंभीर विवेचन किया।

4.3.3 वामन

रीति संप्रदाय के प्रवर्तक आचार्य वामन माने जाते हैं और उन्होंने रीति विवेचन के संदर्भ में ही अपने ग्रंथ 'काव्यालकार सूत्र' में काव्य-लक्षण पर विचार किया है। वे गुण और अलंकार से युक्त शब्दार्थ को काव्य मानते हैं–

काव्य शब्दोडयं गुलालंकारसंस्कृतयोः शब्दार्थयोः वर्तते।''

वामन काव्य को अलंकार द्वारा ग्राहय मानते हैं और समग्र सौंदर्य अलंकार है– काव्य ग्राहयमलंकारात्, सौंदर्यमलंकारः। काव्य में अलंकार के महत्व का प्रतिपादन करते हुए भी वामन ने काव्य की आत्मा के रूप में रीति को मान्यता प्रदान की– 'रीतिरात्मा काव्यस्य' उन्होंने पहली बार काव्य के शरीर और आत्मा के भेद को स्पष्ट किया। विशिष्ट पद रचना रीति है और विशिष्ट का अर्थ गुणयुक्त होने से हैं। इस प्रकार वामन ने अपने काव्य-विवेचन में शब्द और अर्थ को समान महत्व प्रदान किया। उन्होंने गुणों के ग्रहण और दोषों के बहिष्कार पर बल दिया। उनकी दृष्टि में गुण काव्य के अनिवार्य तत्व हैं और अलंकार वांछनीय हैं, अनिवार्य नहीं।''

4.3.4 कुंतक

कुंतक ने अपने ग्रंथ 'वक्रोक्तिजीवितम्' में वक्रोक्ति को काव्य का जीवित (प्राण) सिद्ध किया है। वे शब्द और अर्थ के समेकित रूप को काव्य मानते हैं जो वक्रोक्ति से युक्त हों। उनकी दृष्टि में शब्द और अर्थ अलंकार्य (वर्ण्यवस्तु) हैं और वक्रोक्ति अलंकार है। शब्द और अर्थ का अलंकरण केवल वक्रोक्ति द्वारा ही संभव हैं। अतः आचार्य कुंतक के अनुसार काव्य का लक्षण इस प्रकार है–

शब्दार्थों सहितौं वक्रकविव्यापारशःलिनि।

अर्थात् काव्य मर्मज्ञों को आह्लादित करने वाली वक्रतायुक्त कौशलपूर्ण कवि की रचना में व्यवस्थित शब्द और अर्थ का समन्वित रूप ही काव्य है। आचार्य कुंतक ने बहुत स्पष्ट रूप से यह प्रतिपादित किया है कि जो यह मानते हैं कि कार्य कौशल कल्पित केवल शब्द काव्य है और जो यह कहते हैं कि वैचित्रा (रमणीयता) युक्त अर्थ काव्य है– ये दोनों पक्ष उचित नहीं, अतः खण्डित हो जाते हैं, अर्थात् न केवल शब्द को और न केवल अर्थ को काव्य कहा जा सकता है, अपितु दोनों के सम्मिलन से काव्य होता है। कुंतक की यह भी मान्यता है कि भाषा में एक अर्थ को व्यक्त करने वाले कहे शब्द हो सकते हैं किंतु कवि उन शब्दों में से केवल उसी शब्द को अपने काव्य में स्थान देता है, जो अन्य सभी शब्दों की अपेक्षा वक्र या विलक्षण अर्थ प्रस्तुत करता है, इसी प्रकार के शब्द और अर्थ सहृदयों को आनंदित करते हैं।

आचार्य विश्वनाथ ने कंतुक के मत का यह तर्क प्रस्तुत कर खण्डन किया कि अलंकार कनक-कुंडलवत् होते हैं और वक्रोक्ति भी अलंकार है। अतः बाह्य तत्व होने के

BHDC-106.indd 52 19-03-2021 08:51:34

कारण वक्रोक्ति को काव्य का जीवित (प्राण) नहीं माना जा सकता हैं। यहाँ यह कहा जा सकता है कि 'वक्रोक्ति' उपमा रूपक आदि की भाँति सामान्य अलंकार नहीं है, यह विशिष्ट अलंकार है क्योंकि इसमें वैचित्रय और सौंदर्य को व्यक्त करने की अपूर्व क्षमता है।

4.3.5 मम्मट

आचार्य मम्मट ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'काव्य प्रकाश' में काव्य लक्षण इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

तद् दोषौ शब्दार्थौं सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि।

अर्थात् दोष-रहित, गुण-सहित और कहीं-कहीं अलंकार-रहित शब्दार्थ ही काव्य है। मम्मट द्वारा की गई यह परिभाषा काव्यशास्त्र में बहुत लोकप्रिय है। उन्होंने अपने पूर्ववर्ती आचार्यो के काव्य लक्षणों से कुछ तत्वों का अपने काव्य लक्षण में समन्वय किया है। आचार्य मामह के काव्य लक्षण में 'शब्दार्थौं' विद्यमान है किंतु मम्मट ने 'अदोर्षौ तथा सगुसों' के द्वारा शब्दार्थ के वैशिष्ट को स्पष्ट कर दिया है। इसी प्रकार मम्मट के पूर्ववर्ती आचार्य भोजराज ने अपने ग्रंथ 'सरस्वती कष्ठामरण' में 'निर्दोष गुणवत् काव्यम्' कहकर 'निर्दोषत्व' को काव्य का आवश्यक अंग माना।

आचार्य मम्मट के काव्य-लक्षण का खण्डन आचार्य विश्वनाथ और पंडितराज जगन्नाथ ने किया। विश्वनाथ ने अदोर्षों को यह कहकर अनुपयुक्त माना कि काव्य मानव रचित होता है, इसलिए उसमें मानव सुलभ दोष अवश्य रहेंगे। इस अवधारणा का भी खण्डन किया गया है क्योंकि काव्य में रस को हानि या न्यून करने वाले कारकों को दोष माना गया है। मम्मट का संकेत रसापकर्षक दोषों की ओर है, सामान्य दोषों की ओर नहीं। मम्मट मानते हैं कि शास्त्रीय दोषों के होने पर भी यदि काव्य सहृदयों को आनंदित करता है तो उसे (पोषयुक्त होने से) अकाव्य नहीं कहा जा सकता है।

पण्डितराज जगन्नाथ ने मम्मट के काव्य लक्षण में प्रयुक्त 'शब्दार्थौं' पद पर आपत्ति की है क्योंकि पंडितराज 'शब्द' को ही काव्य स्वीकार करते हैं, शब्दार्थ को नहीं। उन्होंने इस काव्य-लक्षण के 'विशेष्य-शब्दार्थौं' की आलोचना की है। वे मानते हैं कि काव्यत्व न तो शब्द और अर्थ दोनों में और न केवल शब्द या अर्थ में होता है अपितु काव्य तो केवल शब्दों में रहने वाला धर्म है। यदि काव्य को, शब्द और अर्थ दोनों में रहने वाला धर्म मानते हैं तो एक (काव्य) दो (शब्द और अर्थ) में होने से दो (काव्य) हो जाएगा जबकि 'एको न दौ' होने से यह पद्य है, काव्य नहीं– इस प्रकार का व्यवहार होने लगेगा। यदि शब्द और अर्थ में अलग-अलग धर्म माने तो दुहरा काव्यत्व आ जाएगा। अतः न काव्य शब्दार्थ की समष्टि में रहता है और न व्यष्टि में अर्थात् पृथक्-पृथक रूप में अपितु केवल शब्द में काव्यत्व रहता है।

अनलंकृती पुनः क्वापि' अंश का अलंकारवादी आचार्य जयदेव ने प्रबल विरोध किया। उन्होंने तर्क देते हुए कहा कि अलंकार-शून्य का उष्णता रहित आग की भाँति व्यर्थ है। यह आक्षेप इसलिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि मम्मट के काव्य-लक्षण में रस (गुण) और अलंकार का पारस्परिक संबंध है।

4.3.6 विश्वनाथ

विश्वनाथ रसवादी आचार्य हैं, अतः उन्होंने अपने ग्रंथ 'साहित्य दर्पण' में रसपरक लक्षण प्रस्तुत किया– 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्।' उनकी मान्यता है कि रस के अभाव

में किसी भी रचना को काव्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती। विश्वनाथ से कुछ पूर्व महिम भट्ट और चण्डीदास ने रस को काव्य की आत्मा के रूप में स्वीकार किया था। विश्वनाथ ने शब्द या शब्दार्थ में काव्य को न मानकर रसात्मक वाक्य में काव्य की मान्यता दी। विश्वनाथ द्वारा प्रस्तुत यह काव्य-लक्षण संक्षिप्त, सुबोध और उपयुक्त है। इसमें 'वाक्य' से काव्य के बहिरंग स्वरूप का और 'रसात्मक' से अंतरग स्वरूप (आत्मा) का सहजरूप में संकेत हो गया है। रसात्मक के 'रस' कहने से केवल शृंगार आदि रसों से अभिप्राय नहीं है अपितु सहृदयजन-आहलादक रस, भाव, रसाभास, भावाभास, रसध्वनि आदि से है। यहाँ रसात्मक का तात्पर्य आह्लादन से है। कुछ आचार्यों और समीक्षकों ने विश्वनाथ के काव्य-लक्षण में अव्याप्ति दोष माना है तथा यह भी कहा है कि काव्य में सभी वाक्य रसात्मक नहीं होते तो इस परिभाषा के अनुसार उन वाक्यों की स्थिति क्या मानी जाएगी? अनेक आक्षेपों के बावजूद यह काव्य लक्षण बहुत लोकप्रिय है।

4.3.7 पंडितराज जगन्नाथ

पंडितराज जगन्नाथ संस्कृत काव्यशास्त्रीय परंपरा के अंतिम मान्य आचार्य हैं। इनका सुप्रसिद्ध लक्षण ग्रंथ 'रसगंगाधर' है। इस ग्रंथ में उन्होंने काव्य-लक्षण का इस प्रकार उल्लेख किया है– रमणीयता प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्' अर्थात् रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाला शब्द काव्य है। 'रमणीयता' को वे 'लोकोत्तर आह्लादजनक ज्ञानगोचरता' (अनुभूति) मानते हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि रमणीय अर्थ वह है, जिसके ज्ञान से या बार-बार अनुसंधान करने से लोकोत्तर (प्रायः लोक में अनुपलब्ध) आनंद की प्राप्ति होती है। पण्डितराज का 'रमणीयता' दण्डी के 'दृष्टार्थ', वामन के 'सौंदर्य' और कुंतक के 'लोकोत्तर 'आह्लाद' का समानार्थी है– रमणीयता का संबंध काव्य के अंतरंग और बहिरंग दोनों पक्षों से है। पंडितराज जगन्नाथ के काव्य-लक्षण की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार मानी जा सकती हैं– परंपरागत 'शब्दार्थ' और 'वाक्य' को काव्य न मानकर 'शब्द' को काव्य माना गया क्योंकि काव्यत्व वाक्य (शब्द समूह) में ही नहीं अपितु शब्द मात्र में भी संभव है। 'रमणीयता' के अंतर्गत रस, अलंकार, गुण, निर्दोषत्व आदि का समावेश हो जाता है। पंडितराज के काव्य-लक्षण की आलोचना भी 'शब्द' और 'प्रतिपादन' को लेकर की गई है।

4.4 हिंदी के प्रमुख कवियों-आलोचकों की काव्य-लक्षण संबंधी अवधारणाएँ

4.4.1 रीतिकालीन कवियों की मान्यताएँ

हिंदी के रीतिकाल से क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित काव्य शास्त्रीय चिंतन का प्रारंभ होता है जिस पर संस्कृत के लक्षण ग्रंथों का व्यापक प्रभाव है। अतः रीतिकाल को निरूपित काव्य-लक्षणों में मौलिकता का प्रायः अभाव है किंतु हिंदी के निजी काव्यशास्त्र की परंपरा के ऐतिहासिक महत्व की दृष्टि से उनकी काव्य-स्वरूप संबंधी मान्यताओं का अवलोकन-अनुशीलता उपयुक्त है।

चिंतामणि

रीतिकाल में काव्य की परिभाषा प्रस्तुत करने वाले महत्वपूर्ण आचार्य चिंतामणि हैं। उनके पूर्व आचार्य केशवदास ने 'कवित्रिया' और 'रसिक प्रिया' लक्षण ग्रंथों की रचना की है जिनमें काव्य के अनेक उपकरणों-तत्वों का विवेचन है किंतु उन्होंने काव्य का लक्षण नहीं प्रस्तुत किया, अपितु अलंकारों के महत्व का विशेष उल्लेख किया है।

BHDC-106.indd 54 19-03-2021 08:51:34

चिंतामणि ने अपने काव्यशास्त्रीय ग्रंथ 'कविकुलकल्पतरु' में कविता का लक्षण इस प्रकार किया है–

सगुन अलंकारन सहित दोष रहित जो होय।
शब्द अर्थ ताको कवित, बिबुध कहत सब कोय।।

चिंतामणि रसवादी आचार्य हैं। वे रस को काव्य की आत्मा मानते हैं और शब्द अर्थ को काव्य का शरीर तथा अलंकारों को आभूषण की संज्ञा देते हैं।

कुलपति मिश्र

कुलपति मिश्र का लक्षण ग्रंथ 'रस रहस्य' है। इसमें उन्होंने काव्य–लक्षण प्रस्तुत किया है। इनके काव्य-लक्षण का आधार मम्मट का 'काव्य प्रकाश' है–

दोष रहित अरूगुन सहित कछुक अल्प अलंकार।
सबद अरथ सो कदित है; ताको करो विचार।।

एक दूसरी काव्य-परिभाषा भी कुलपति ने दी है, जो समन्वयात्मक है। इसमें विश्वनाथ और पंडितराज के काव्य-लक्षणों का प्रभाव लक्षित होता है–

जग ते अद्‌भुत सुख सदन, सद अर्ब कवित्र।
यह लच्छन मैंमे कियो समुझि ग्रंथ बहुचित्र।।

महाकवि देव

कवि देव ने अपने प्रसिद्ध लक्षण ग्रंथ शब्द रसायन में समर्थ काव्य का लक्षण इस प्रकार दिया है–

शब्द सुमति मुख तें कढ़े पद वचननि अर्थ।
कंद भाव भूषण सरस सों कहि काव्य समर्थ।।
देव ने रस को काव्य की आत्मा स्वीकार किया है–
अलंकार भूषम सुरस जीव छेद तन भाख।
तन भूषण हू बिन जिये बिन जीवन तन राख।।

4.4.2 आधुनिक हिंदी आलोचकों के मत

श्यामसुंदर दास

बाबू श्यामसुंदर दास को 'साहित्यालोचन' प्रसिद्ध ग्रंथ है जिसमें उन्होंने साहित्य की आलोचना संबंधित विषयों की विवेचना की है। उनके काव्य-स्वरूप के विवेचन में पाश्चात्य साहित्य-चिंतन और भारतीय काव्य शास्त्रीय चिंतन का समन्वय लक्षित होता है। काव्य-लक्षण का उल्लेख उन्होंने इस प्रकार किया है– ''काव्यशब्द का वहीं अर्थ है जो साहित्य शब्द का वास्तविक अर्थ है। साहित्य दर्पणकार ने काव्य को 'रसात्मक वाक्य' बताया है अर्थात् काव्य के द्वारा पाठक अथवा श्रोता के चित्र में रस की उत्पत्ति का अर्थ है, आनंदपूर्ण एक विशेष मानसिक अवस्था का उत्पन्न हो जाना। 'रमणीय अर्थ का प्रतिपादक शब्द काव्य है, यह परिभाषा 'रसगंगाधर' नामक ग्रंथ की है। 'रमणीय अर्थ के प्रतिपादक का आशय है सौंदर्य की सृष्टि करके पाठक तथा श्रोता

BHDC-106.indd 55 19-03-2021 08:51:34

के मन मे आनंद उत्पन्न करना..... अथवा दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि काव्य वह है जो हृदय के अलौकिक आनंद या चमत्कार की सृष्टि करे। इस प्रकार हम देखते हैं कि काव्य कला है और 'काव्य' साहित्य का समानार्थक है।''

बाबू श्यामसुदंर दास की इस काव्य-लक्षण संबंधी विवेचना में भारतीय और पाश्चात्य मतों का समन्वय है। उन्होंने प्राचीन संस्कृत आचार्यों विश्वनाथ और पंडितराज जगन्नाथ के काव्य-लक्षणों के अनुसार अलौकिक चमत्कार (आनंद) की सृष्टि करने के वैशिष्ट्य को काव्य का प्राण तत्व स्वीकार किया। वे पाश्चात्य चिंतन के आधार पर काव्य को कला मानते हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल

आधुनिक काल में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी समीक्षा को सुव्यवस्थित और व्यापक रूप प्रदान किया। उनकी आलोचना में आत्मचिंतन के साथ भारतीय काव्यशास्त्र और पाश्चत्य साहित्यालोचन की प्रवृत्तियों का संतुलित समन्वय है। आचार्य शुक्ल रसवादी समीक्षक हैं। वे काव्य की आत्मा-रस को ही मानते हैं। आचार्य शुक्ल काव्य-लक्षण संबंधी विचार उनकी कृतियों 'चिंतामणि-भाग एक' तथा 'रस मीमांसा' में विशेष रूप से मिलते हैं। 'कविता क्या है' निबंध में कविता की परिभाषा इस प्रकार दी गई है– ''जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं।'' (चिंतामणि भाग–2)। इस परिभाषा में आचार्य शुक्ल ने कविता को सामाजिक धरातल प्रदान किया है। साधारणीकरण की क्रिया या भाव योग से व्यक्ति अपनी निजी परिधि व्यक्तिगत भावनाओं से ऊपर उठकर सामान्य भाव भूमि पर आ जाता है। इसीलिए शुक्ल जी ने यह स्पष्ट किया है कि कविता मनुष्य के हृदय को उदात्त बनाती है। ''कविता ही मनुष्य के हृदय को स्वार्थ-बंधनों के सकुचित मंडल से ऊपर उठाकर लोक-सामान्य भाव-भूमि पर ले जाती है। जहाँ जगत की नाना गतियों के मार्मिक स्वरूप का साक्षात्कार और शुद्ध अनुभूतियों का संचार होता है। इस भूमि पर पहुँचे हुए मनुष्य को कुछ काल के लिए अपना पता नहीं रहता। वह अपनी सत्ता को लोक सत्ता में लीन किए रहता है। उसकी अनुभूति सबकी अनुभूति होती है या हो सकती है। इस अनुभूति योग के माध्यम से हमारे मनोविकारों का परिष्कार तथा शेष सृष्टि के साथ हमारे रागात्मक संबंध की रक्षा और निर्वाह होता है'' (चिंतामणि-1)।

आचार्य शुक्ल भाव या अनुभूति को काव्य की मूल वस्तु मानते हैं, क्योंकि भाव के द्वारा ही मनुष्य मानवेतर प्राणियों और पदार्थों के साथ रागात्मक संबंध स्थापित करता है। उन्होंने वैशिष्ट्य को उतना महत्व नहीं दिया जितना भाव को। रस ही काव्य का मूल तत्व है, अभिव्यक्ति पक्ष या कलात्मकता उनकी दृष्टि में गौण है।

'काव्य में रहस्यवाद' निबंध में भी शुक्ल जी ने काव्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है– ''कविता का संबंध ब्रह्म की व्यक्त सत्ता से है, चारों ओर फैले हुए गोचर जगत से है; अव्यक्त सत्ता से नहीं। जगत भी अभिव्यक्ति हैं, काव्य भी अभिव्यक्ति है। जगत अव्यक्त की अभिव्यक्ति है और काव्य इस अभिव्यक्ति की भी अभिव्यक्ति है।''

इसमें आचार्य शुक्ल काव्य को व्यक्त जगत की अभिव्यक्ति मानते हैं और यह व्यक्त जगत अव्यक्त (ब्रह्म) की अभिव्यक्ति है। इसका आशय है कि काव्य का सीधा या प्रत्यक्ष संबंध जगत (जड़ और गतिशील-चेतन, से है। आचार्य शुक्ल द्वारा निरूपित काव्य-स्वरूप अत्यधिक व्यापक है, अतः इसमें अतिव्याप्ति दिखाई देती है।

BHDC-106.indd 56 19-03-2021 08:51:34

बाबू गुलाब राय

बाबू गुलाब राय द्विवेदी युग के सुप्रसिद्ध साहित्यकार और समीक्षक थे। सिद्धांत और अध्ययन, साहित्य और समीक्षा, नव रस तथा काव्य के रूप उनके समीक्षा-ग्रंथ है। वे रसवादी समीक्षक हैं और उनकी समीक्षा में भारतीय एवं पाश्चात्य तत्वों का सहज समन्वय है। वे लिखते है कि मेरा दृष्टिकोण सदैव समन्वयात्मक रहा है इसीलिए आलोचना में भी समन्वयवादी है। काव्य-कला और साहित्योगों के विवेचन में मैंने इस पद्धति को अपनाया है। उनका काव्य-लक्षण इस प्रकार है– ''काव्य संसार के प्रति कवि की भाव-प्रधान (किंतु क्षुद्र वैयक्तिक संबंधों से मुक्त) मानसिक प्रतिक्रियाओं की कल्पना के ढाँचे में ढली हुई, श्रेय की प्रेमरूपा प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति है।'' (सिद्धांत और अध्ययन)।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की समीक्षा दृष्टि मानवतावादी है। उन्होंने साहित्य का मुख्य लक्ष्य मनुष्य को माना है। वे मनुष्य को मनुष्य बनाने में ही साहित्य की उपयोगिता स्वीकार करते हैं। साहित्य वृहत्तर मानव-समाज से जुड़ा रहता है। जीवन से पृथक होकर साहित्य का कोई महत्व नहीं है। वस्तुतः जीवन से अलग होकर साहित्य वाग्विलास के अतिरिक्त कुछ नहीं है। उनकी मान्यता इस प्रकार है– ''मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता और परमुखापेक्षिता से बचा न सके, उसकी आत्मा को तेजोद्दीप्त न बना सके, जो उसके हृदय को पर दुखकातर और संवेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है। (अशोक के फूल–निबंध संग्रह, पृ. 179)। साहित्य को आनंद का उच्छलन या अतिरेक मानते हुए द्विवेदी जी लिखते हैं ''साहित्य मनुष्य के अंतर का उच्छलित आनंद है, जो उसके अंतर में अटाएँ नहीं आ सका था। साहित्य का मूल यही आनन्द का अतिरेक है। उच्छलित आनंद के अतिरेक से उद्भूत सृष्टि ही सच्चा साहित्य है'' (*साहित्य का अर्थ,* पृ. 70)।

जयशंकर प्रसाद

छायावाद के सुप्रसिद्ध कवि, नाटकार और कथाकार हैं। वे एक प्रतिभावान चिंतक भी थे। काव्य के स्वरूप के संबंध में उन्होंने गंभीर एवं प्रौढ चिंतन किया है। उनकी कृति 'काव्य और कला तथा अन्य निबंध' में काव्य की परिभाषा इस प्रकार दी गई है– ''काव्य आत्मा की संकल्पात्मक अनुभूति है, जिसका संबंध विश्लेषण, विकल्प या विज्ञान से नहीं है। वह एक श्रेयमयी रचनात्मक शान धारा है। आत्मा की मनन शक्ति की वह असाधारण अवस्था, जो श्रेय सत्य को उसके मूल चाहत्व में सहसा ग्रहण कर लेती है, काव्य में संकल्पात्मक मूल अनुभूति कही जा सकती है।''

प्रसाद की काव्य परिभाषा की मौलिकता यह है कि उन्होंने काव्य का संबंध मन से नहीं अपितु आत्मा से स्थापित किया है। इस काव्य-लक्षण से यह स्पष्ट होता है कि काव्य रसात्मक या रसमीय शब्दार्थ मात्र न होकर आत्मा की अनुभूति है और जो विशुद्ध रूप में संकल्पात्मक है अर्थात् वहाँ विशेषय या विज्ञान जैसे बौद्धिक ऊहापोह के लिए स्थान नहीं है।

सच्चिदानंद हीरानंद वास्यायन 'अज्ञेय'

प्रयोगवाद के प्रवर्तक अज्ञेय के काव्य चिंतन पर टी. एस. इलियट की निर्वैयाक्तिकता का प्रभाव दिखाई देता है। अज्ञेय काव्य को कला की साधना मानते हैं। काव्य के संबंध में उनके विचार इस प्रकार हैं–

BHDC-106.indd 57 19-03-2021 08:51:34

''काव्य-रचना मूलतः अपने को अपनी अनुभूति से पृथक् करने का प्रयत्न है अपने ही भावों के निर्व्यक्तिकरण की चेष्टा। बिना इसके काव्य निरा आत्म निवेदन है और सच होकर भी इतना व्यक्तिगत है कि काव्य अभिधा के योग्य नहीं हैं– सर्वनवीनता की कसौटी पर वह खरा नहीं उतरता।'' अज्ञेय यह स्वीकार करते हैं कि कलाकार या साहित्यकार को कला और समाज दोनों के प्रति दायित्व का निर्वहन करना होता है। उनका कथन महत्वपूर्ण है। ''कलाकार निरा व्यक्ति नहीं है, सामाजिक भी है और निःससंदेह उसका समाज के प्रति दायित्व है किंतु जो व्यक्ति और समाज का पचड़ा खड़ा करते हैं, वे भूल जाते हैं कि समाज के प्रति उत्तरदायित्व के अतिरिक्त कलाकार का कला के प्रति भी उत्तरदायित्व होता है।''

इलियट की तरह अज्ञेय भी मानते हैं कि कविता अनुभूति की अभिव्यक्ति नहीं है अपितु अनुभूति से मुक्ति है। रस की स्थिति को वे काव्य रचना की चामत्कारिक तीव्रता में मानते हैं– ''काव्य का रस कवि में, या कवि के जीवन में या वर्ण्यविषय अथवा अनुभूति में, या किसी शब्द विशेष में नहीं, वह काव्य-रचना की चमत्कारिक तीव्रता में है (त्रिशुंक)।''

4.5 प्रमुख पाश्चात्य विचारकों के काव्य-लक्षण संबंधी मत

पाश्चात्य कवियों, आलोचकों और विचारकों ने काव्य या साहित्य के स्वरूप के संबंध में विचार व्यक्त किए हैं। आधुनिक काल के हिंदी कवियों और समीक्षकों की काव्य-परिभाषाओं पर पश्चात्य कवियों और विचारकों का प्रभाव है। प्रमुख पाश्चात्य विचारकों की काव्य संबंधी अवधारणाएँ इस प्रकार हैं–

वर्ड्सवर्थ

वर्ड्सवर्थ अंग्रेजी के स्वच्छंदतावादी कवियों में प्रमुख हैं, उन्होंने कविता को परिभाषित करते हुए लिखा है–

कविता प्रबल भावनाओं का सहज संवेग है, जिसका स्रोत शांत क्षणों में स्मृत मनोवेग है।'' इस परिभाषा में वर्ड्सवर्थ ने कविता को सहज संवेग माना हैं किंतु उनके विचार में कवि का मानस उस प्रेरणा के क्षण से पूर्व ही गहन चिंतन, मनन और अध्ययन से निर्मित हो चुका होता है। इस परिभाषा से यह भी स्पष्ट है कि कविता प्रयत्न साध्य नहीं है।

कालरिज

कालरिज ने कविता की अनेक रूपों में परिभाषा दी है। उनका मानना है कि कविता 'best words in best order' है अर्थात् सर्वोत्तम शब्द ही सर्वोत्तम क्रम में कविता का रूप धारण करते हैं। इस परिभाषा में शब्दों के क्रम-विधान के सौंदर्य एवं उत्तमता पर बल दिया गया है।

पी. बी. शेली

पी. बी. शेली स्वच्छंदतावादी कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। उनके अनुसार सामान्यतः कविता कल्पना की अभिव्यक्ति है– “Poetry, in A general sense, may be defined to be the expression of the imagination” इस परिभाषा में कल्पना को कविता का मुख्य तत्व माना गया है जिसके बिना कविता संभव ही नहीं है।

BHDC-106.indd 58 19-03-2021 08:51:34

मैथ्यूआर्नाल्ड

मैथ्यूआर्नाल्ड मानवतावादी समीक्षक हैं, वे कला का प्रयोग जीवन के लिए मानते हैं। उनके अनुसार कविता मूलतः जीवन की आलोचना है।'

Poetry is, At bottom, A critiecism of life

यह काव्य-परिभाषा अति व्याप्ति-दोष से युक्त है क्योंकि जीवन की आलोचना एक व्यापक क्षेत्र है और सारा वाङ्मय जीवन की आलोचना होता है।

डॉ. जॉनसन

जॉनसन ने कविता की परिभाषा इस प्रकार प्रस्तुत की है– "Poetry is the Art of uniting Pleasure with truth by calling imagination to the help of reason."

अर्थात् कविता कल्पना और युक्ति के सहयोग द्वारा सत्य को आनंद से एकीभूत करने की कला है। डॉ. जॉनसन की धारणा है कि कविता में सत्य की आनंदमय अनुभूति विद्यमान रहती है जिसकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति कल्पना और युक्ति द्वारा संभव होती है। यह परिभाषा सत्य, आनंद, कल्पना और बुद्धि चार प्रमुख तत्वों को व्यक्त करती है।

4.6 सारांश

काव्य या कविता के आस्वादन, अनुशीलन या समीक्षा करने के लिए आवश्यक है कि काव्य के लक्षणों को सम्यक् रूप से समझा जाए। लक्षणों से ही किसी वस्तु का स्वरूप सहज रूप में बोधगम्य होता है। इसीलिए भारतीय एवं पाश्चात्य आचार्यों, कवियों और समीक्षकों ने काव्य के लक्षण या स्वरूप के संबंध में अपने-अपने मतों को अभिव्यक्त किया है। भारतीय काव्यशास्त्र के मान्य आदि आचार्य भामह हैं, उन्होंने शब्दार्थ के समन्वित रूप को काव्य की संज्ञा दी। उनके परवर्ती आचार्यों द्वारा उनके प्रभाव ग्रहण करते हुए काव्य की परिभाषाएँ दी गई हैं। काव्य-लक्षणों पर व्यापक रूप से विचार करने वाले संस्कृत के आचार्यों में भामह के बाद दण्डी, वामन, कुंतक, मम्मट, विश्वनाथ और पंडितराज जगन्नाथ मुख्य हैं। संस्कृत के आचार्यों का काव्य स्वरूप निरूपण स्थूल से सूक्ष्म की और लक्षित होता है। प्रारंभिक काव्य-लक्षण अलंकार सिद्धांत-सम्मत होने के कारण सौंदर्य तत्व-प्रधान है। इसे काव्य का बहिरंग पक्ष माना गया है, क्योंकि इसमें अलंकार, वक्रता, निर्दोषत्व आदि पर विशेष बल है। दूसरे वर्ग के काव्य-लक्षणों में रस और ध्वनि को प्रमुखता मिली, यह काव्य का अंतरंग पक्ष है। आचार्यों द्वारा काव्य लक्षणों का खण्डन-मण्डन तो किया गया किंतु काव्य के प्रमुख तत्व का तिरस्कार नहीं किया गया। अंतर केवल तत्व की प्रधानता का है, जिसे काव्य का प्रारूप या आत्मा सिद्ध किया गया। इसीलिए भारतीय काव्यशास्त्र में अनेक सिद्धांत– संप्रदाय विकसित हुए, यथा अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि और औचित्य।

हिंदी के रीतिकालीन आचार्यों ने भी काव्य-स्वरूप विवेचन किया है किंतु उसमें मौलिकता का सर्वथा अभाव है, भामह, मम्मट विश्वनाथ और पंडितराज जगन्नाथ के ग्रंथों से हिंदी के आचार्य कवि विशेष रूप से प्रभावित हैं। हिंदी के आधुनिक काल में समीक्षकों और कवियों द्वारा जो काव्य-परिभाषाएँ दी गई, उन पर पाश्चात्य-समीक्षा का भी प्रभाव है। आधुनिकालीन हिंदी के आलोचकों द्वारा मनुष्य और जीवन को केंद्र में रखकर काव्य परिभाषाएँ प्रस्तुत की गई। पाश्चात्य विचारकों के काव्य-लक्षणों में

BHDC-106.indd 59 19-03-2021 08:51:34

संगीतात्मकता, जीवन-सत्य, कल्पना, अनुभूति, बुद्धितत्व आदि पर बल दिया गया है। समस्त भारतीय और पाश्चात्य काव्य-लक्षणों के अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट है कि काव्य की कोई एक निश्चित परिभाषा वस्तुनिष्ठ रूप में देना संभव नहीं है क्योंकि वह और समाज के परिवेश, परिस्थितियों तथा विचारधाराओं से प्रभावित होती रही है।

4.7 अवधारणात्मक शब्द

वाङ्मय : वाङमय मूलतः वाणी से जुड़ा है अर्थात् जो कुछ भी बोला जाय वह वांङ्मय है किन्तु व्यापक अर्थ में ज्ञानात्मक एवं रचनात्मक सभी प्रकार की रचना वांङ्मय कहलाती है।

अव्याप्ति : जहाँ मूल आशय से कम बात कही जाती है, वहाँ अव्याप्ति दोष होता है। तर्कशास्त्र में इसे एक तर्कदोष माना जाता है।

काव्य-लक्षण : कविता के प्रमुख तत्वों को अभिव्यक्त करने वाले कारक एवं उनके मानक तत्व एवं उनके निर्धारक प्रतिमान काव्य-लक्षण माने जाते हैं। काव्य-लक्षण कविता के बहिरंग तत्व हैं।

अतिव्याप्ति : जहाँ मूल आशय से अधिक बात कह दी जाय, वहाँ अतिव्याप्ति दोष होता है यह तर्कशास्त्र की शब्दावली है।

जीवित : संस्कृत आचार्यों ने जीवित को प्राणतत्व अर्थात् आत्मा स्वरूप माना। कुन्तके वक्रोक्ति को काव्य का जीवित तत्व मानते हैं।

4.8 उपयोगी पुस्तकें

उपाध्याय बलदेव – *संस्कृत आलोचना*, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ।

दीक्षित सूर्यप्रसाद (सं.) *हिंदी का अपना काव्य-शास्त्र*, विश्वविद्यालय प्रकाशन हिंदी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

मिश्र भागीरथ, *काव्यशास्त्र*, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर।

मिश्र भागीरथ, *हिंदी काव्यशास्त्र का इतिहास* – प्रकाशक, लखनऊ विश्वविद्यालय (हिंदी विभाग)।

शर्मा रामानंद, *भारतीय काव्य-शास्त्र* – लोकवाणी प्रकाशन, संस्थान दिल्ली।

श्रीवास्तव देवकी नंदन, *काव्यशास्त्र चर्चा*– नंदन प्रकाशन, रानीकटरा; लखनऊ।

हीरा राजवंश सहाय, *भारतीय आलोचना शास्त्र*; बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना।

हीरा राजवंश सहाय, *भारतीय काव्यशास्त्र के प्रतिनिधि सिद्धांत*, चौखंभा, विद्याभवन, वाराणसी।

वर्मा धीरेंद्र (सं.) *हिंदी साहित्य कोष, भाग-1*, ज्ञानमंडल लि. वाराणसी।

4.9 बोध प्रश्न

1) काव्य-लक्षण का अभिप्राय स्पष्ट कीजिए।

2) आचार्य भामह के काव्य-लक्षण की विवेचना कीजिए।

BHDC-106.indd 60 19-03-2021 08:51:34

3) कुंतक के काव्य-लक्षण की समीक्षा कीजिए।

4) मम्मट के काव्य-लक्षण का महत्व स्पष्ट कीजिए।

5) पंडितराज जगन्नाथ के काव्य-लक्षण की विशेषताएँ लिखिए।

6) हिंदी आलोचकों के काव्य-लक्षण संबंधी मतों का विवेचन कीजिए?

4.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) देखिए भाग 4.2

2) देखिए उपभाग 4.3.1

3) देखिए उपभाग 4.3.4

4) देखिए उपभाग 4.3.5

5) देखिए उपभाग 4.3.7

6) देखिए भाग 4.4

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY